डॉ. अनिरुद्ध प्रसाद
हिन्दी विभाग
महाराजा कॉलेज

एम.ए. हिन्दी I सेमेस्टर

भाषा विज्ञान - प्रथम पत्र

प्रश्न: भाषा के उत्पत्ति के दैवीय सिद्धांत पर प्रकाश डालिए।

उत्तर: कुछ विद्वानों का कहना है कि भाषा की उत्पत्ति दैवीय कारण से हुयी है। इसलिए भाषा ईश्वर प्रदत्त है। जैसा कि विदित है हमारे यहाँ यह अवधारणा है कि इस सृष्टि की उत्पत्ति ईश्वर के कारण ही हुयी है। ईश्वर ही सारे पदार्थ एवं प्राकृतिक शक्तियों के सृष्टिकर्ता हैं। यह कहना कहाँ तक उचित है इस संबंध में बिना ठोस आधार के कुछ कहा नहीं जा सकता। स्वभावतः भाषा की उत्पत्ति को लेकर भी उन्हें कोई उलझन नहीं है। जब ईश्वर मनुष्य को उत्पन्न कर सकता है तो उसकी भाषा को वह उत्पन्न क्यों नहीं कर सकता?

मनुष्य जब उत्पन्न हुआ होगा तो अपनी संपूर्ण विशेषताओं के साथ ही उत्पन्न हुआ होगा। उसमें अन्य प्राणियों की अपेक्षा उसकी शारीरिक सौष्ठव, आंगिक स्पन्दनशीलता एवं चेतना का विकास हुआ होगा। उसके बाद उसमें भाषा का ज्ञान आया होगा। मनुष्य में जिस कारण से उत्तमकोटि की शारीरिक और बौद्धिक श्रेष्ठता आ सकती थी, उसी कारण से भाषिक श्रेष्ठता क्यों नहीं आ सकती? इसलिए प्रत्येक धर्म के अनुयायी न केवल अपने धर्म को बल्कि अपने धर्म ग्रंथ को श्रेष्ठ बताता है और वह उसी धर्म से संबंधित भाषा की कल्पना करता है। हिन्दू संस्कृत भाषा को देववाणी कहकर पुकारता है और सब भाषाओं की जननी बताता है। ऋग्वेद में एक मंत्र है -

देवीं वाचमजनयन्त देवा;
तां विश्वरूपा: पशवो वदन्ति।

अर्थात वाग्देवी वाणी को देवों ने उत्पन्न किया, उसे सभी प्राणी बोलते हैं। इस मंत्र और वाणी दिव्य की उत्पत्ति संबंधी शब्दों में कही गयी है। महर्षि पाणिनी अपने द्वारा उद्धृत चौदह सूत्रों को शिव के शिव के डमरू निनाद से उत्पन्न बताया है। अनीश्वरवादी बौद्ध और जैन भी पालि और अर्द्धमागधी को आदिभाषा बताते हैं क्योंकि बुद्ध ने अपना पहला उपदेश इन्हीं भाषाओं में दिया था। इसी प्रकार ईसाई (ओल्ड टेस्टामेन्ट) को हिब्रू भाषा मानते हैं और मुसलमान अरबी भाषा को। ईसाईयों का विश्वास है कि ईश्वर आदम और हव्वा को पूर्ण रूप से विकसित इसी भाषा

P.T.O

में किया। यदि मनुष्य अपनी महत्वकांक्षा के कारण स्वर्ग में पहुँचने का दुष्प्रयास न किया होता तो आज संसार में जो भाषा-भेद दिखलायी पड़ता है, वह शायद न होता। सभी जगह हिब्रू भाषा का ही चलन होता। बिना ईश्वर की कृपा से एक पत्ता भी नहीं डोल सकता, यदि इस उक्ति पर विचार करें तो ईश्वर की इच्छा ही सारी समस्याओं का समाधान कर सकता है। किंतु वास्तविक जीवन में हम ऐसा नहीं देखते हैं। बिना ईश्वर की कृपा से बहुत कुछ घटित होता रहता है जिसका मुकाबला मनुष्य जरूरत पड़ने पर खुद ही करता है। विज्ञान भी इस तर्कहीन उक्ति को स्वीकार नहीं करता है।

दरअसल इस सिद्धांत में आपत्ति योग्य यह बात है कि यदि भाषा ईश्वर-प्रदत्त है तो इसमें इतना भेद क्यों है? अन्य पशुओं की भाषा तो संसार में एक ही है। किंतु मनुष्यों की भाषा में इतना अंतर क्यों है। प्रायः हम देखते हैं संसार के सभी कुत्ते भौंकते हैं, घोड़े हिनहिनाते हैं, बिल्लियाँ म्याऊँ-म्याऊँ करती हैं। किंतु मनुष्य की भाषा हर पाँच कोस पर बदल जाती है। दैवीय सिद्धांत में इस विषमता का समाधान नहीं मिल पाता है। इसलिए श्रद्धा से उत्पन्न दैवीय सिद्धांत में आस्था और अवैज्ञानिकता काम करती है। यानी की दृष्टि दो है। पहला श्रद्धा से उत्पन्न हुयी भाषा तर्क द्वारा उठायी गयी कठिनाइयों के ओर से अपनी आँखें फेर लेता है। इस तरह की स्वीकृति मनुष्य की बुद्धि में स्थिर नहीं होती। दैवीय सिद्धांत में इतना सार है कि मनुष्य को ही अंततः सार्थक भाषा के प्रयोग की अनुमति मिली है। सार्थक भाषा के प्रयोग के योग्य ध्वनि यंत्र मिला और उसे संचालित करने वाली बुद्धि भी। इस दृष्टि से विचार करें तो ईश्वर का प्रिय पात्र बनने का प्रयत्न अवश्य करें किंतु भाषा को दैवीय बनाने की कोशिश न करें। भाषा तो एक बहता हुआ प्रवाह जिसे अर्जित करना पड़ता है, वह स्वतः आकर आपके मुखारविन्द पर विराजमान नहीं हो जाती। ध्वनियंत्र या बुद्धि दूसरे पशुओं को भी मिल सकती थी किंतु वे इसका प्रयोग कैसे करते? स्पष्ट है कि यह मत वैज्ञानिक दृष्टि से अनुपयुक्त है।